

यू जी सी अनुमोदित पत्रिका  
आई एस एस एन 0523-1418

अंक 315 वर्ष 63

# भाषा

सितंबर—अक्तूबर 2024

भाषा

सितंबर—अक्तूबर 2024



सत्यमेव जयते

केंद्रीय हिंदी निदेशालय  
उच्चतर शिक्षा विभाग  
शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार



**लेखक : वंदना यादव**

प्रसिद्ध साहित्यकार, दो उपन्यास  
और कहानी संग्रह प्रकाशित



**समीक्षक : सूर्यकांत शर्मा**

स्तंभकार एवं समीक्षक

**यु**द्ध और शांति दो ऐसे समीकरण हैं जो सृष्टि के आयाम हैं। युद्ध है तो शांति की कीमत का अहसास होता है और शांति है तो विकास परवान चढ़ता है। तिस पर भी सैनिक का महत्त्व लगभग केंद्रीय होता है। यह धारणा अर्वाचीन, प्राचीन, अतीत तक पल्लवित-पुष्पित होती आई है। वीरता का सेहरा तो सैनिक के सर पर ही बँधता आया है वरना तो कुप्रथाओं में यथा सती, जौहर या फिर गुमनाम होकर बहादुरी और प्राप्त मेडल की कीमत नारी यानी पत्नी/माँ /बहन/भाभी आदि ही चुकाती नजर आती रही हैं। अब सभी तो कैकेयी सरीखी प्रसिद्धि नहीं प्राप्त कर सकीं। रामायण में माता सीता ने भी इसकी कीमत चुकाई। यद्यपि गोआ की लेफ्टिनेंट गवर्नर स्वर्गीय श्रीमती मृदुला सिन्हा ने अपनी कालजयी कृति 'सीता पुनि बोली' में स्त्री का पक्ष बेहद संजीदगी से प्रस्तुत किया तिस पर भी उनका यह प्रयास ईश्वरीय चरित्रों के महिमा मंडन का आध्यात्मिक-दर्शन प्रयास ही माना जाता रहा है। ऐसे में समीक्षित उपन्यास 'कितने मोर्चे' में लेखिका वंदना यादव नारी शक्ति के सहज-सुलभ और औचित्यपूर्ण अंदाज-ए-बयां से पाठकों के लिए एक नया संसार सृजित करती प्रतीत होती हैं।

युद्ध से अब सारी दुनिया दो चार है। कभी यूक्रेन-रूस तो कभी हमास-इजरायल में, युद्ध की विभीषिका अपने पूरे यौवन पर है और शिकार कौन होता या हुआ है? केवल और केवल स्त्रियाँ या फिर बच्चे। जीवन के संघर्ष को झेलती अकेली और निपट अकेली स्त्री। बच्चे समय की शाख पर चलकर स्वाभाविक जीवन चक्र में लय प्राप्त कर अपने-अपने जीवन के सोपानों में रम जाते हैं! तब शेष रह जाती है, पत्नी/माता/सास वैधव्य के अकेलेपन को अश्वत्थामा-सी भोगने के लिए। एक समय के बाद शहीद की पत्नी और बच्चों को पेंशन या एकमुश्त धनराशि से जीवनयापन करने की विडंबना को झेलना शेष यही रह जाता है।

कितने मोर्चे (उपन्यास), लेखिका : वंदना यादव, अद्विक पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष : 2023 पृष्ठ : 438, मूल्य : 499 रुपये

लेखिका ने इस दर्द को बेहद संवेदनशील ढंग से प्रस्तुत किया है। पति के मरणोपरांत, वीरता के पदक या सम्मान लेते हुए भावनाओं को काबू में रखकर सम्मान लेकर खामोशी से गुमनाम हो जाना। युद्ध का यह भी तो एक दुखद और दुर्भाग्यपूर्ण पहलू है जिसे लेखिका ने केंद्र में रखकर नारी की दशा और दिशा दोनों को ही समाज के सामने खोलकर रख दिया है। स्त्री विमर्श जो बहुत चर्चित होकर अब अंग्रेजी भाषा के शब्दों में लगभग 'क्राइड आउट' होने के कगार पर है, उसे फिर से चर्चा के केंद्र तथा सुर्खियों में भी ला खड़ा किया है। कथा क्षितिज पर उभरती साहित्यकार रेनु यादव इस उपन्यास को सुप्रसिद्ध एवं दिवंगत फणीश्वर नाथ रेणु के उपन्यास 'मैला आंचल' का हवाला देते हुए अपने शब्दों में कुछ इस प्रकार बयां करती हैं, "जिस प्रकार फणीश्वर नाथ रेणु का 'मैला आंचल' पूरे गाँव का प्रतिनिधित्व करता है तथा इसमें सूक्ष्मता से वहाँ की आंचलिक समस्याओं का वर्णन किया गया है उसी प्रकार 'कितने मोर्चे' उपन्यास शहर का प्रतिनिधित्व करता है और इसमें बहुत ही सूक्ष्मता से शहरीकरण के रहन-सहन एवं संघर्षों का वर्णन दिखाई देता है। साहित्यकार एवं आलोचक डॉ. सुनीता के अनुसार " 'कितने मोर्चे' प्रतिरोध पीड़ा की मानसिकता का विवरण और वक्त की शिला पर अंकित सैन्य जीवन की त्रासदी की शिनाख्त करता है। क्षितिज के पार सरहद पर जा चुके लोगों के पीछे छूटे घरों में कैद, यथार्थ से मोह भंग की सच्ची संवेदनशीलता से संपृक्त परकाया प्रवेश का दस्तावेज—शैली में चित्रित उपन्यास है।" इन टिप्पणियों के साथ-साथ साहित्यकार अंजू शर्मा के अनुसार " 'कितने मोर्चे' उपन्यास सैनिकों के परिवार, विशेषकर उनकी पत्नियों के जीवन के लंबे एकाकी जीवन से जुड़ी समस्याओं और उससे संबंधित भावनात्मक पहलू को बड़े ही रोचक और मार्मिक अंदाज में प्रस्तुत करने में सफल रहा है'। इन तीनों महिला साहित्यकारों की टिप्पणियाँ हमारे शहरी जीवन, सैनिकों के जीवन और सैनिक पत्नियों के बारे में बहुत कुछ कह जाती हैं, कुछ इशारे में और कुछ शब्दों में।

देखा जाए तो रील लाइफ यानी बॉलीवुड में आपको बीते जमाने की चर्चित फिल्म 'आराधना' तो याद होगी ही! कुल मिलकर नारी ही युद्ध और उसके बाद की पीड़ा, पितृसत्तात्मक व्यवस्था को भोगती है। भारतीय संस्कृति और समाज के दोहरे मापदंड का खामियाजा स्त्री ही क्यों भोगे? इन्हीं पीड़ाओं, कुंठाओं, कड़वी सच्चाइयों का सृजनात्मक विचार—गुच्छ है वंदना यादव का समीक्षित उपन्यास— 'कितने मोर्चे'। हिंदी साहित्य, आलोचना, समालोचना के शिखर पुरुष स्वर्गीय श्री नामवर सिंह जी द्वारा इस अप्रतिम उपन्यास की सशक्त और अनुप्राणित कर देने वाली भूमिका का लिखा जाना इस अनूठी साहित्यिक कृति की अहमियत को बताता है।

वरिष्ठ पत्रकार उर्मिलेश इस उपन्यास के कथानक को बिल्कुल नया मानते हैं। उनके अनुसार यह ऐसे परिवारों के एहसास, संघर्ष और परिवेश की कहानी है जो अति संवेदनशील इलाकों में तैनात फौजियों के हैं पर वे उनसे बहुत दूर के किसी शहर में अकेले रहने और अपने हर मसलों से स्वयं ही जूझने के लिए अभिशप्त हैं। यह संघर्ष

मुख्यतः फौजियों की पत्नियाँ ही करती हैं। समूचे उपन्यास के केंद्र में सैनिक पत्नियाँ ही हैं।

24 सर्ग और सवा चार सौ से अधिक पृष्ठों में नारी शक्ति, और हाँ, फौजी जीवन के जीवंत परंतु सारे के सारे अंधेरों को आत्मसात कर, पाठकों के सामने एक लीक से हटकर सच्चाई से तरबतर पुस्तक प्रस्तुत की गई है।

जाने-माने प्रवासी कथाकार आदरणीय श्री तेजेंद्र शर्मा का जिक्र लेखिका ने अपनी बात में किया है। प्रसिद्ध और समीचीन विद्वानों यथा प्रोफेसर सत्यकेतु सांकृत ने इस उपन्यास के आखिर में बेहद अहम विस्तृत टिप्पणियाँ की हैं जो युवा पाठक को उपन्यास की सूक्ष्म से सूक्ष्मतर जानकारीयों सहज रूप से बताती हैं। उदाहरण के तौर पर उनका मानना है कि वंदना यादव कथ्य के साथ शिल्प में भी प्रयोग करती हैं। उपन्यास में वही दृश्यात्मक शैली है जिसके लिए प्रेमचंद को याद किया जाता है और लेखक के दृश्यात्मक निर्माण में भाषा दुरुह नहीं होती है और न ही शैली वर्णनात्मक होती है। यह अपने आपमें एक विशेषता है। हम पाठक से लेकर साहित्यकार बंधु तक जब इस उपन्यास को पढ़ते हैं तो एक तथ्य मुख्य रूप से सामने आता है, वह यह कि वर्तमान कथा साहित्य की विषय वस्तु में परिवर्तन लाने में जिनकी अहम भूमिका है उन्हीं में से एक हैं वंदना यादव। वे अपने उपन्यासों में पारंपरिक विषयों में कई ऐसे तथ्य तलाश कर लेती हैं जिस पर आम लेखकों की नज़र नहीं जाती है और वह जिन विषयों की तलाश करती हैं, वह उनके भोगे हुए यथार्थ का हिस्सा होता है। पूरे उपन्यास में लेखन शैली इस प्रकार की है कि स्वतः ही कौतूहल और जिज्ञासा पैदा होती है। कहानी के पात्रों के साथ-साथ पाठक भी उसमें एक प्रतिभागी के रूप में खड़ा नजर आता है। वंदना यादव ने भाषा और विषय वस्तु में रोचकता के साथ-साथ सुंदर अभिव्यक्ति का समावेश किया है। यही वजह है कि समूचे उपन्यास को हम यथार्थपरक कथ्य और शिल्प से अभिमंत्रित उपन्यास कह सकते हैं।

‘पाखी’ पत्रिका के पूर्व संपादक स्वर्गीय प्रेम भारद्वाज का मानना है कि ‘कितने मोर्चे’ उपन्यास में वर्ग संघर्ष, अकेले गृहस्थ जीवन की परेशानियों का चित्रण, व्यवस्था के प्रति आक्रोश है... स्त्री विमर्श है...। यह अद्भुत डिटेलिंग वाला उपन्यास है यह फौजियों का ही नहीं, फौजियों के पीछे खड़ी हुई महिलाओं के ऊपर लिखा गया उपन्यास है। लेखन में परिपक्वता है। उपन्यास पढ़ते हुए लगता ही नहीं कि यह लेखिका का पहला उपन्यास है। इसी क्रम को यथावत जारी रखते हुए वरिष्ठ पत्रकार एवं साहित्यकार प्रियदर्शन के द्वारा की गई प्रशंसा यथा देश पर मर मिटने वाले सैनिकों के शौर्य की गाथाएँ खूब लिखी गई हैं लेकिन उनके पीछे छूटे परिवारों पर किसी की नजर नहीं पड़ती। वंदना यादव का यह उपन्यास इसलिए उल्लेखनीय है कि उन्होंने वह मोर्चा खोला है जो अब तक अनदेखा रहा है।’ पुस्तक के अंत में अंकित टिप्पणियाँ— सत्यम् शिवम् सुंदरम् की सौंधी-सी खुशबू पाठक को अभिमंत्रित

कर पढ़ने का आमंत्रण—सा देती प्रतीत होती हैं।

शहीद की पत्नी से वार्तालाप से आरंभ! उपन्यास का तेवर पहले से ही बता देता है कि मनोवैज्ञानिक रूप से मजबूत लेखिका बेहद वस्तुनिष्ठ अंदाज में फौजी जीवन, पत्नियों, माताओं और बच्चों के जीवन को खोलकर बेबाकी से प्रस्तुत करने वाली है और हुआ भी ठीक वैसा ही है। हमारी फिल्मों ने फौजी जीवन की बड़ी ही सुंदर, अनुशासित या सटीक शब्दों में कहें तो अति यथार्थवादी छवि को देशभक्ति की चॉकलेट में पेश किया है। इस कृति में सिविलियन और फौजी जीवन में व्याप्त विसंगतियों, विद्रूपताओं को बेहद संजीदगी, सहजता और साफगोई से बयां किया गया है।

लेखिका ने फौज में बॉर्डर या फील्ड पोस्टिंग में तैनात अधिकारियों की सकारात्मक और नकारात्मक कारगुजारियों के किस्से बेबाकी से बयां किए हैं। इसके साथ ही साथ, पीछे रह गई उन पत्नियों का चित्रण है जो पत्नियाँ न होकर के एक अच्छी माँ का कर्तव्य निभाने में पूरा जीवन व्यतीत कर देती हैं। स्त्रियाँ ही स्त्रियों को सहयोग नहीं करती हैं और बाद में कुत्सित मानसिकता के दंश को मौन रहकर भोगती हैं। उपन्यास के पात्र रजिया और मिसेज गुरंग के माध्यम से इस बात को भी प्रदर्शित किया गया है।

उपन्यास में एक कमी अखरती है, प्रत्येक अध्याय को शीर्षक देना या उसका सार या इंगित मात्र, अध्याय के आरंभ में ही दिया जाना चाहिए था। यद्यपि लेखिका ने इस ओर अप्रत्यक्ष प्रयास किए हैं जिससे पाठक को थोड़ा—सा आभास अवश्य हो जाता है कि क्या बयां होना है और फिर यह कोई थ्रिलर तो है नहीं! कुछ चित्रों और रेखाचित्रों की दरकार भी रही है। यहीं पर विषय संपादक यानी सब्जेक्ट एडिटर की हमारे हिंदी प्रकाशन या साहित्य जगत में ख़ास जरूरत है। प्रकाशक लेखक से ही ये सारी अपेक्षाएँ रखता है और परिणामस्वरूप एक अच्छी कृति विश्व स्तर की होने से या तो रह जाती है या फिर मीडिया समीक्षक इसे लिखना या बताना नहीं चाहते और लगभग यही इस कृति में भी कमोबेश हुआ है।

देखा जाए तो उपन्यास एक वृहत् विधा है और इसकी प्रूफ रीडिंग और संपादन तो और भी दुष्कर है। जानी मानी प्रूफ रीडिंग विशेषज्ञा व्योमा मिश्रा ने काफी मेहनत की है तिस पर भी बैडमिंटन का 'बैटमिंटन' हो ही गया है।

एक पुरानी परंतु मौजू और मानीखेज कहावत है कि 'ओनली द वियरर नोज हाउ द शू पिंचिज' यानी जिसके पैर ना फटी बिवाई वो क्या जाने पीर पराई। पाठक सोच रहे होंगे कि समीक्षक ने ऐसा क्यों लिखा? वस्तुतः यह ठीक ही है क्योंकि फौजी जीवन के बीच में से जब कोई फौजी पत्नी यानि वंदना यादव उस जीवन को समझकर सोचकर बेहद जिम्मेदारी से उन अनछुई सच्चाइयों को उकेरती है तो यह कहावत स्वयं ही साक्षी हो जाती है, इस उपन्यास के खरेपन और सत्यता की प्रतिमूर्ति होने की।

उपन्यास में कई जगह पर अति विस्तार हो गया है जिसे आगामी संस्करणों में काटे—छाँटे जाने की महती आवश्यकता है। क्या ही बेहतर हो कि इस प्रकार की

कृतियों को अंग्रेजी भाषा में भी अनूदित किया जाए ताकि इसकी पहुँच बढ़ सके। यहाँ पर यह जानना भी बेहद जरूरी है कि हर भाषा की परंपराएँ, परिपाटियाँ नितांत भिन्न होती हैं और विश्व की कनेक्टिव यानी लिंक भाषा के लिए तो यह बहुत आवश्यक है। अतः अनुवाद अगर शाब्दिक न होकर समग्र रूप से ग्राह्य हो तभी इस अनूठी कृति को अंग्रेजी साहित्य में स्वीकारा और सराहा जा सकेगा। उपन्यास का अंतिम अध्याय शहादत से समाप्त होता है और अंग्रेजी की कहावत भी परिलक्षित होती है.... एंड दे ब्रॉट हर वारियर डेड। यह अध्याय मर्म को छूने वाला है और साथ ही साथ यह भी बताता है कि शहीद फ़ौजी या उसकी शहादत उत्सव की बात तो कतई नहीं हो सकती और यह बात उस वीर सैनिक या ऑफिसर की पत्नी या माँ के लिए तो बेहद उदासी का क्षण होता है, सदा के लिए।

सार रूप में एक अनूठे विषय को उठाता, औचित्यपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करता एक संवेदनशील उपन्यास, जिसे पाठक दीर्घ काल तक स्मृतियों में संजोकर रखना चाहेंगे।

